भारतीय सांस्कृति का विदेशों पर प्रभाव

रेखा श्रीवास्तव, असिस्टेंट प्रोफेसर, समाजशास्त्र
राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मुसाफिरखाना, अमेठी
https://doi.org/10.61410/had.v19i1.171

प्रत्येक राष्ट्र की पहचान उसकी सांस्कृतिक धरोहर तथा सामाजिक मूल्यों से होती है भारतीय संस्कृति का स्वरूप निःसंदेह रूप से समन्वयवादी तथा लोक कल्याणकारी रहा है। संस्कृति मानव–चेतना की स्वस्तिपरक ऊर्जा का ऐसा उद्धमुखी सौन्दर्यमयी प्रवाह है जो व्यक्ति के मन, बुद्धि और आत्मा के सूक्ष्म व्यापारों की रमणीयता से होता हुआ समष्टि–कर्म की सुष्ठुता में साकार होता है। संस्कृति का एक रूप देश–काल सापेक्ष है तो दूसरा देश–काल निरपेक्ष। सचमुच भारत एक महासागर है। भारतीय संस्कृति महासागर है। विश्व की तमाम संस्कृतियों आकर इसमें समाहित हो गई है। आज जिसे आर्य संस्कृति, हिन्दू संस्कृति आदि नामों से जाना जाता है, वस्तुतः वह भारतीय संस्कृति है। जिसकी धारा सिंधु घाटी की सभ्यता, प्रागवैदिक और वैदिक संस्कृति से झरती हुई नवोन्मेषकार तक बहती रही है। अनेकानेक धर्मो सभ्यताओं और संस्कृतियों को अपने में समाहित किए हुए इस भारतीय संस्कृति को सामाजिक संस्कृति की कहना उचित है। संस्कृति की सामाजिकता का तात्पर्य है कि इसमें अनेक ऐसे मतों का प्रश्रय मिला है, जो परस्पर नकुल–सर्प– संबंध के लिए प्रसिद्ध रहे हैं। अनेकता में एकता के साथ हमारे समाज की रचनात्मक ऊर्जा अधिकाधिक मानवतावादी दृष्टिकोण अपना तो रही है। यह सांस्कृतिक अनुशासन भारतीय समाज की विशिष्टता है। गुरूदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर के एक गीत का भाव है यहाँ आर्य भी आए, अनार्य भी आए, द्रविड़, चीनी, शक, हूण, पठान, मुगल सभी वहाँ आए, लेकिन कोई भी अलग नहीं रहा, सह इस महासागर में विलीन होकर एक हो गए।

इस शोध पत्र के लिए सामग्री अधिकांश रूप से द्वितीयक स्त्रोतों से ग्रहण की गई है। इसमें एतिहासिक विश्लेषण व वर्णनात्मक दृष्टिकोण के साथ–साथ शोधकर्ता ने अपने व्यक्तिगत अनुभवों को भी स्थान दिया है। शोध सामग्री प्रसिद्ध पुस्तकों, पत्र–पत्रिकाओं व समाचार पत्रों से प्राप्त की गई है।

संस्कृति हमारे आंतरिक गुणों का वह समूह है जिससे हमस भ्य समाज में गतिशील रहते है और व्यक्त करते हैं। वह एक ऐसी प्रेरक शक्ति है जो हमारे सामाजिक व्यवहारों को निश्चित करती है। इसके मुख्यतः दो पक्ष हैं – प्रथम रहन–सहन, आधार–विचार, संस्कार आदि। दूसरा पक्ष परम्परा से संबंधित है अर्थात् परम्परा से प्राप्त विश्वास, मान्यताएँ, आस्थाएँ, रीति–रिवाज एवं स्थिति, जलवायु उस देश के व्यक्तियों के खान–पान, रीति–रिवाज एवं रहन–सहन पर प्रभाव डालती है। संस्कृति का उद्देश्य मनुष्य के मन, प्राण और शरीर की शक्तियों को विकसित करना, उसकी विभिन्नताओं में समन्वय करके समाज को संगठित करना है।

पाण्डुरंग सदाशिव ने संस्कृति की व्याख्या करते हुए कहा है – ''संस्कृति मनुष्य के त्याग, संयम, सेवा, प्रेम, ज्ञान, विवेक, आदि भावों को जगाती है संस्कृति का अर्थ है अंधकार से प्रकाश की ओर, भेद से अभेद की ओर जाना, कीचड़ से कमल की ओर, अव्यवस्था से व्यवस्था की ओर जाना, सारे धर्मो का मेल, सारी जातियों का मेल, ज्ञान–विज्ञान का मेल, मानव जाति के बेड़े को मंगल की ओर ले जाना ही संस्कृति है। मनुष्य के लौकिक–पारलौकिक सर्वाभ्युदय के अनुकूल आचार–विचार ही संस्कृति है।''[1]

''मानव जीवन के विभिन्न पक्षों और पहलुओं का व्यापक चित्र भारतीय संस्कृति में उपलब्ध है। यह अत्यन्त दुर्लभ है। यह एक व्यापाक और विशाल सांस्कृति धारा है, जो विभिन्न उपधाराओं से सम्पन्न एवं पुष्ट हुई है। ऋषि – मुनियों की प्राचीन भारतीय मनीषा के संस्कारों के साथ शक, हूण, पठान, यवन, तुर्क, मुगल और अरब संस्कारों के सम्मिलन ने इसे सामाजिक संस्कृति का स्वरूप दिया है। यह शताब्दियों की यात्रा से पुष्ट हुई है।[2] इसलिए सम्पूर्ण सामाजिक जीवन का चरण विकास संस्कृति में ही होता है। विभिन्न युगों में विभिन्न सभ्यताओं का उत्कर्ष और उनकी प्रगति का मानदण्ड संस्कृति को ही माना गया है।

संस्कृति मनुष्य का वो तमाम सचेतन और सामूहिक क्रियाकलाप है जो उसे प्रकृति की अचेतन व्यवस्था के ऊपर सोद्‌देश नियंत्रण कायम करने की क्षमता प्रदान करता है। वह क्रियाकलाप मनुष्य को अन्य जीवों से अलग करते हुए सत्य, सौंदर्य और स्वतन्त्रता का निर्माण करने वाले एक सार्वभौम प्राणी के रूप में उसकी पहचान कायम करता है। अर्थात् संस्कृति श्रम और सृजन के जरिए मानव जाति के विकास की प्रक्रिया है। मनुष्य ने अपनी चेतना और सम्बन्धों को विकसित किया है। अनुभवों और अनुभूतियों को व्यापकता

दी है। अपने परिवेश को और स्वयं को भी अधिकाधिक मानवीय और सामाजिक बनाया है। सृजनशीलता मानवीय चेतना का केन्द्रीय तत्व है। परिस्थितियों की प्रतिकूलताएं मानव की सृजनेच्छा को अवरूद्ध नहीं कर पाती है। अपनी इस शक्तिगति इच्छा के बल पर मानव नाना वस्तुओं तथ्यों का आविष्कार करता रहता है। इतना ही नहीं वह अपनी अन्तशीलता से प्रेरित होकर सांस्कृतिक मूल्यों की रचना के साथ उनका अनुपालन भी करता है। वस्तुतः मनुष्य की यह प्रकाशमयी प्रवृति उसे 'मानव' की संज्ञा प्रदान करती है। संस्कृति से मनुष्य सज–सँवरकर, आप्त–आनन्दित होकर दूसरे का प्रसन्न प्रमुदित कर उदात्त मानवीय पथ पर अग्रसर होता है। कहने का आशय यह है कि जिन तत्वों से मानव अपना मानसिक और शारीरिक परिष्कार करता है और परिष्कार के उपारान्त अपनी उज्ज्वल वृत्तियों से माजोन्यन तथा राष्ट्रीय उत्थान करता है, वह संस्कृति है।

भारतीय संस्कृति को अतिपूरातन काल से ही महत्व प्राप्त है। यद्यपि वेदों में 'संस्कृति' का कोई स्पष्ट रूप व्यंजित नहीं हुआ है। तथा पि इस शब्द का उल्लेख मिलता है। 'ऐतरेय बाह्यण' में संस्कृति को स्वरूपित करने का प्रयास लक्षित होता है। वहाँ संस्कृति मानव के वैयक्तिक और समष्टिगत उत्कर्ष की प्रतौति कराती है। 'छान्दोग्यापनिषद् ने मनुष्य को मानवतावादी चेतना से अनुप्राणित करने वाली दृष्टि को संस्कृति की व्याख्या प्रदान की है। जीवन में, समाज में मानवीय दृष्टि की महत्ता निर्विवाद है, क्योंकि इसी भावना के परिणामतः सभी धर्म, कर्म, सम्प्रदाय, सदाचार समन्वित होते हैं। ऐसी विशिष्ट संस्कृति के प्रति भारतीय चिंतकों क`मत इस प्रकार है। रविन्द्रनाथ – ''संस्कृति मस्तिष्क का जीवन है।''[3]

राहुल सांकृत्यायन – ''एक पीढ़ी आती है, वह अपने आचार–विचार, रूचि–अरूचि, कलाक पीढ़ी के बाद दूसरी, दूसरी के बाद तीसरी और आगे बहुत सी पीढ़ियाँ आती –जाती रहती हैं और सभी अपना प्रभाव या संस्कार अगली पीढ़ी पर छोड़ती जाती है। यहीं प्रभाव संस्कृति है।''[4]

दिनकर – ''''संस्कृति जिन्दगी कए एक तरीका है और यह तरीका सदियों से जमा होकर समाज मे ंाया रहता है, जिसमें हम जनम लेते है।''[5]

हजारी प्रसाद द्विवेदी – ''मनुष्य की श्रेष्ठ साधनाएँ ही संस्कृति हैं।''[6]

डॉ0 वासुदेव शरण अग्रवाल – ''संस्कृति मनुष्य के भूत, वर्तमान और भावी जीवन का सर्वांगपूर्ण प्रकार है। हमारे जीवन का ढंग हमारी संस्कृति है। जीवन के नाना विधरूपों का समुदाय ही संस्कृति है।''[7]

''संस्कृति मानवीय जीवन की प्रेरक शक्ति है। वह जीवन की प्राणवायु है जो उसके वैतन्यभाव का साक्ष्य देती है। संस्कृति विश्व के प्रति अनन्त मैत्री की भावना है।''[8]

अंत कहा जा सकता है कि संस्कृति मानव के गतानुगतिक संस्कारों का वह सफल रूप है जिससे उसके सामाजिक आचार – विचार पर्व त्योहार, रीति–रिवाज, नीति–धर्म, अध्यात्म–कला आदि प्रतीति होती है। संस्कृति मानव की एक तरफ तो विधायिका है और दूसरी तरफ परिचायिका भी। समुन्नत और सौन्दर्यमयी संस्कृतिख समुन्नत, स्वस्थ एवं सुन्दर समाज की सर्जना करती है। संस्कृति एक अनवरत प्रवाह है। अस्तु देशकाल समाज की सापेक्षिकता की स्थिति में संस्कृति भौतिकता से सम्पृक्त होती है। यह विशिष्ट देशकाल से अनप्राणित भी होती है और उस से निरपेक्ष भी तथा निरपेक्ष की स्थिति में वह भौतिकता से उपरत होकर मानवीय मूल्यों की सम्प्रसारिकता होती है। इसीलिए, संस्कृति को जीवन मूल्यों की सम्पोषिका –संधारिका कहा गया है। भारतीय संस्कृति बाहर से बहुरंगी प्रतीत होती है, लेकिन अन्तरीण दृष्टि से एक है। उसके अन्तस से एक ऐसी उच्छल धारा प्रवाहमान है जो उत्तर –दक्षिण, पूर्व–पश्चिम को एक सूत्र में पिरोने में अत्यन्त समर्थ है। यह विश्व की सर्वाधिक प्राचीन एवं समृद्ध संस्कृति है। इसे विश्व की सभी संस्कृतियों की जननी कहा जाता है। जीने की कला हो या विज्ञान और राजनीति का क्षेत्र, भारतीय संस्कृति का सदैव विशेष स्थान रहा है। अन्य देशों की संस्कृतियाँ तो समय की धारा के साथ–साथ नष्ट होती रही है। किन्तु भारत की संस्कृति आदि काल से ही अपने परम्परागत अस्तित्व के साथ नष्ट होती रही है। किन्तु भारत की संस्कृति आदि काल से ही अपने परम्परागत अस्तित्व के साथ अजर–अमर बनी हुई है। आयात्मिकता भारतीय संस्कृति की प्रथम प्रसनन प्रवृत्ति है। यह भारतीय संस्कृति की शाश्वत विशेषता है। विश्व के सभी क्षेत्रों और धर्मा की अपने रीति रिवाजों, परम्पराओं और विशेष गुणों के साथ अपनी संस्कृति है। लेकिन हमारी भारतीय संस्कृति स्वाभाविक रूप से शुद्ध है। जिसमें भारतीय संस्कृति समन्वय की विराट चेष्टा हसे पुलकित है। यह व्यक्ति–व्यक्ति में किसी प्रकार के भेद को स्वीकार नहीं करती है, क्योंकि कहा जाता है कि भौगोलिक दृष्टि से भारत विविधताओं को दश है, फिर भी सांस्कृति रूप से एक इकाई के रूप में इसका अस्तित्व प्राचीनकाल से बना हुआ है। यहां आर्थिक और सामाजिक भिन्नता भी विद्यमान है लेकिन इन विभिन्नताओं के कारण ही भारत में अने सांस्कृतिक उपधाराएँ विकसित होकर पल्लवित हुई है। इसलिए यह पूरे विश्व के लिए एक

मिसाल है। कि अनेक भिन्नता के बावजूद भी भारत की पृथक सांस्कृतिक सता रही है। लोक कल्याण की कामना भारतीय संस्कृति की विशेष पहचान है। इस संदर्भ में स्वामी विवेकानन्द का मत है कि ''संसार नहीं हम संसार के ऋणी है। यह तो हमारा सौभाग्य है कि हमें संसार में कुछ कार्य करने को मिला है। संसार की सहायता करने मे हम वास्तव में स्वयं को ही कल्याण करते हैं।''[9]

बड़ों के लिए आदर और श्रद्धा भारतीय संस्कृति का एक महत्वपूर्ण सिद्धान्त है। बड़े खड़े है तो उनके सामने न बैठना, बड़ों को अपने पर स्थान छोड़ देना, उनको खाना पहले परोसना जैसी क्रियाएँ अपनी दिनचर्या में प्रायः दिखाई देती है। जो हमारी संस्कृति का अभिन्न अंग है। हम देखते हैं कि युवा कभी अपने बुजुर्गों को उनका नाम लेकर सम्बोधन नहीं करते हैं। सभी बड़ों पुरुषों, और महिलाओं का आशीर्वाद प्राप्त करने के लिए और उन्हें मान सम्मान देने के लिए हम उनके चरण स्पर्श करते है। छात्र अपने शिक्षक के पैर छूते हैं। मन, शरीर, वाणी, विचार शब्द और कर्म में शुद्धता हमारे लिए महत्वपूर्ण है। इसलिए हमें कभी भी कठोर और अभद्र भाषा का प्रयोग नहीं करना चाहिए, दूसरों को बाएँ हाथ स कोई वस्तु देना एक रूप से अपमान माना जाता है। देवी – देवता को चढ़ाने के लिए उठाए फूल को सूंघना नहीं चाहिए। यह एक सुसंस्कृत भारतीय के लिए बहुत आवश्यक है। इस प्रकार भारतीय संस्कृति स्थिर एवं अद्वितीय है जिसके संरक्षण की जिम्मेदारी वर्तमान पीढ़ी पर हैं। इसकी उदारता और समन्वयवादी गुणों ने अन्य संस्कृतियों को समाहित तो किया हैं, किन्तु अपने अस्तित्व के मूल को सुरक्षित रखा है। एक राष्ट्र की संस्कृति उसके लोगों के दिल और आत्मा में बसती है। सर्वांगीणता, विशालता, उदारता और सहिष्णुता की दृटि से अन्य संस्कृतियों की अपेक्षा भारतीय संस्कृति अग्रणी स्थान रखती है।

प्रणव भावना भारतीय संस्कृति की विशिष्टतम पहचान है। प्राणी मात्र तथा प्रकृति जगत् से सहज स्नेह सूत्र में बँधना हमारी संस्कृति का सन्देश है। साने गुरू जी ने इस संदर्भ में अपने मत प्रकट करते हुए लिखा है कि '–चराचर से प्रेम करने वाली, सर्वत्र कृतज्ञता का प्रकाश करने वाली भारतीय संस्कृति है। विश्वभर से प्रेम करने का विशाल ध्येय अपने सामने रखने वाली ऐसी भारतीय संस्कृति को शत्–शत् प्रणाम्।''[10] यदि भारतीय संस्कृति पर एक दृष्टि डाले तो चार बातें बहुत ही स्पष्ट है। प्रथम, भारतीय संस्कृति प्रगतिशील रही है। द्वितीय वह असांप्रदायिक है, उसकी अंतर –धारा में चिरंतन से सहिष्णुता की भावना का प्रवाह बहता रहा है। उनके बार सांप्रदायिक वैमनस्य उभरे, उग्र हुए, फिर भी संप्रदायों ने इस सहिष्णुता की भावना को तिलांजली कभी नहीं दी। सभी संप्रदाय अंत में गंगा की सहायक नदियाँ ही सिद्ध हुए। तृतीय, भारतीय संस्कृति की भारत के समस्त इतिहास के प्रति ममत्व की भावना है और चैथी बात हैं भारतीय संस्कृति की अखिल भारतीय भावना सहस्त्रों मील की दूरी पर स्थित बद्री नारायण, गंगोत्री, काशी, रामेश्वरम्, पुरी, द्वरिका, जैसे तीथ स्थानों की भक्ति और प्रेम से यात्रा करना हर व्यक्ति (वह चाहे जिस प्रांत का निवासी हो) अपना कर्तव्य मानता है। क्योंकि सांस्कृतिक दृष्टि से वे समस्त भारत को अपना देश समझते हैं। आचार्य शंकर ने चार कोनों पर चार पीठों की जो स्थापना की उसके पीछे यहीं भावना थी। इसी भावना के वशीभूत होकर अयोध्या में राम (गोस्वामी तुलसीदास के राम, जो विष्णु के अवतार हैं) रामेश्वर में शिव की उपासना करते हैं। 'निराला' के राम रामेश्वरम् में शक्ति की उपासना करते हैं। शक्ति की पूजा का अनुष्ठान कहीं अधूरा न रह जाए, इसके लिए वे अपने नयन–कमल देवी को चढ़ाने के लिए तत्पर हो उठते हैं। कहाँ है इनमें शैवों, वैष्णवों और शाक्तों का वैमनस्य, तुलसीदास के राम तो स्पष्ट कहते हैं –

''शिवद्रोही मम दास कहावा, सो नर नहिं सपनेहू मोहिं पावा''।[11]

श्रीमती महादेवी वर्मा का कहना है कि ''भारतीय संस्कृति का प्रश्न अन्य संस्कृतियों से कुछ भिन्न है, क्योंकि वह अतीत की वैभव का था ही नहीं, वर्तमान की करूण गया भी है। उसकी विविधता प्रत्येक अध्ययनशील व्यक्ति को कुछ उलझन में डाल देती है। संस्कृति विकास के विविध रूपों की समन्वयात्मक समष्टि है और भारतीय संस्कृति विविध संस्कृतियों की समन्वयात्मक समष्टि है। इस प्रकार इन्होंने कहा है कि ''भारतीय संस्कृति विविधतामयी है, क्योंकि प्रकृति सबको स्वीकृति देती है। किसी एक विचार, एक भावना और एक धारणा की सीमा उसके लिए बंधन है, क्योंकि वह असंख्य नदियों–स्त्रोतों को अपने में मुक्ति देन वाला समुद्र है।''[12]

भारतीय संस्कृति के स्वरूप और स्वभाव की पहचान को यदि संक्षेप में सूत्रबद्ध किया जाए तो हम यह कहना चाहेंगे कि भारतीय संस्कृति अपने स्वभाव और स्वरूप में प्रगतिशील और समन्वयात्मक है। गंगा यमुना रूपी वैदिक तथा वैदिकेतर अन्य धाराओं के संगम से अनी भारतीय संस्कृति इतिहास के किसी भी युग में स्थिर व जड रही है। यह निरंतर प्रवाहमान धार्मिक और साहित्यक प्रभावों और आदेशों को अपने में समाहित करते हुए निरन्तर गतिशील रही, निरन्तर विकासमान रही। भारतीय संस्कृति का प्रचार प्राचीनकाल

के सभ्य संसार मे ंभारत की स्थिति अत्यधिक महत्वपूर्ण थी। हिन्द महासागर के तट पर स्थित होने के कारण भारत की केन्द्रीय स्थिति थी। इसलिए वह तत्कालीन सभ्य और सुसंस्कृत देशों के समुद्री भागों के बीच में स्थित होने के कारण वह उन देशों में फैली सभ्यताओं के सम्पर्क में आता रहता था। इसी से सुमात्रा, जावा, म्यांमार और मलाया जैसे देश भारतीय संस्कृति के सम्पर्क में आकर सभ्य बने। लेकिन सिर्फ मध्य में स्थित होने के कारण ही उन पर इसका हमारी संस्कृति का प्रभाव नहीं पड़ा। बल्कि व्यापार की वृत्ति ने इसको और बढ़ाया दिया, क्योंकि संस्कृति का प्रसार विजय और व्यापार के साथ होता है। भारतीय संस्कृति के प्रसार में भारतवासियों की व्यापार यात्राओं ने अनुपम सहयोग प्राप्त किया। उस समय में भारतीयों का ज्ञात था कि पूर्वी द्वीप समूह ममालों और स्वर्ण के खानों से भरपूर हैं, इसलिए भारतीय नाविक और व्यापारी उन देशों की अत्यधिक यात्रा करते थे, जिनके कारण वहां की जातियाँ उनके सम्पर्क में आने लगी और भारतीय संस्कृति प्रभावित होने लगी।

धार्मिक प्रसार का उत्साह प्राचीन ऋषि–मुनियों और बौद्ध धर्म के प्रचारकों में धार्मिक प्रचार का उत्साह अत्यधिक था, इसलिए वे भी व्यापारियों के साथ–साथ धर्म प्रसार के लिए विदेशों में जाते रहते थे। इनका जीवन त्याग एवं तपस्या के तेज से आलोकित रहता था। ये लोग अनेक मुश्किल बाधाओं का सामना करते और निःशंक होकर असभ्य जातियों को धर्मोपदेश देकर अपने धर्म में दीक्षित रहते थे। इनका लक्ष्य विश्व में सत्य का प्रचार–प्रसार करना था। इसलिए भारतीय संस्कृति के प्रचार और प्रसार का सबसे अधिक श्रेय उन साहसी और उत्साही भारतवासियों को प्राप्त है जिन्होंने विभिन्न देशों में जाकर भारतीय उपनिवेशों की स्थायी रूप से स्थापना की। इन्हीं उपनिवेशों ने भारतीय संस्कृति के प्रचार के लिए अपने सम्पर्क में आने वाली जातियों को पूर्णतया प्रभावित किया। भारतीय संस्कृति के प्रसार के लिए प्रमुख देशों और विदेशों से आने वाले यात्रियों का वर्णन निम्न शीर्षकों के अन्तर्गत किया जा सकता है।

मध्य एशिया – यह विभिन्न जातियों के निवास और उनकी संस्कृतियों के अविशष्ट अवशेषों के लिए प्रसिद्ध है। मौर्य साम्राज्य के विस्तार, सम्राट अशोक के धर्म प्रचार तथा कुषाण शासकों के इस भार पर अधिकार के कारण भी भारत का मध्य एशिया के साथ घनिष्ठ सम्पर्क स्थापित हो गया था। चीनी यात्री फाह्यान के अनुसार ईसवी सन् की प्रथम शताब्दी तक मध्य एशिया का भारतीयकरण किया जा चुका था। वहां की समस्त जातियों ने भारतीय धर्म और भाषा ग्रहण कर ली थी। वहाँ से मिले अवशेषों से सिद्ध हो चुका है कि वहाँ अब से लगभग दो हजार वर्ष पूर्व अनेक ऐसे नगर थे जहाँ भारतीय निवास करते थे। वहाँ पर की गई खुदाई में अनेक स्थानों पर महात्मा बुद्ध, गणेश्ज्ञ, कुबे तथा अन्य देवी – देवताओं की मूर्तियाँ, बौद्ध स्तूप, बिहार, चित्र हस्तलिखित ग्रन्थ, भारतीय सिक्के तथा भारतीय लिपि में लिखे छोटे–छोटे अभिलेखों की उपलब्धि हुई। इससे स्पष्ट है कि वहाँ हिन्दू धर्म का व्यापक प्रसार या संस्कृत भाषा का प्रयोग किया जाता था। सातवीं शताब्दी में चीनी यात्रा हेनसांग ने इस बात की पुष्टि की है कि उसके काल के मध्य एशिया में भारतीय संस्कृति तथा बौद्ध धर्म का पूर्णरूपेण प्रसार था। उस समय मध्य एशिया में सिति कुछ भारतीय राज्य काश्गार, कूचा और खोतान थे। भारतीय संस्कृति के इन मुख्य केन्द्रों से भारतीय धर्म प्रचारकों ने आगे बढ़कर चीन, कोरिया और जापान आदि एशिया के दूरस्थ भागों में बौद्ध धर्म और भारतीय संस्कृति की विजय पताका फहराई।

मध्य एशिया में भारतीय संस्कृति और धर्म प्रसार चीनख जापान, कोरिया आदि द्वीप समूह में किया गया। ईसवीं सन् की प्रथम शताब्दी के कश्मय, मातंग, धर्मरत्न आदि धर्म प्रचारक बौद्ध धर्म और भारतीय संस्कृति का संदेश लेकर चीन में प्रविष्ट हुए तभी तीसरी शताब्दी से छठी शताब्दी के समय सम्पूर्ण चीन देश में बौद्ध धर्म फैल गया। चीन के सम्राटों ने राजधर्म को उच्च स्थान दिया। वहाँ पर बौद्ध बिहारों का निर्माण कराया गया। इसके पश्चात् चीन में तांग वंश का शासन का आरम्भ हो गया। जो 698ई0 से 907 ई0 तक रहा। यह चीन के इतिहास में बौद्ध धर्म का स्वर्ण युग माना जाता है। इससे अनेक चीनी बौद्ध महात्मा बुद्ध की पवित्र भूमि का दर्शन करने तथा बौद्ध धर्म ग्रन्थों को प्राप्त करते भारत आए। वहाँ उन्होंने पालि व संस्कृत भाषा का अध्ययन किया और बौद्ध ग्रन्थों का चीनी भाषा में अनुवाया किया। वहाँ जाकर उन्होंने भरतीय संस्कृति का प्रयार किया।

चौथी शताब्दी ने बौद्ध धर्म का प्रचार चीन से कोरिया मे ंहोने लगा। वहीं कोरिया में छठी शताब्दी में इस र्ध का प्रसार जापान द्वीप समूह में हुआ। भारतीय संस्कृति ने जापान की संस्कृति को अत्याधिक मात्रा में प्रभावित किया। मंगोलो द्वारा 13वीं शताब्दी में बौद्ध धर्म को स्वीकार किया गया। उस समय अफगानिस्तान में संस्कृति भाषा को महत्व दिया जाता था। आज भी वहाँ के लोग संस्कृत भाषा का प्रयोग करते है।

अफगानिस्तान के समान ही ईरान, सीरिया, और इराक आदि देशों में भी इस्लाम के पूर्व बौद्ध धर्म प्रचलित था।

सातवीं शताब्दी के कई भारतीय विद्वानों ने तिब्बत की यात्रा की और वहाँ बौद्ध धर्म का प्रचार किया। इसके बाद 747ई. में कश्मीर से आचार्य पद्मासम्भव तिब्बत पहुँचे। वहाँ उन्होंने तन्त्रवाद से युक्त बौद्ध धर्म की महायान शाखा का प्रसार किया। महायान के आगे चलकर ही तिब्बत में लामा मत का विकास हुआ। तिब्बत के बौद्ध शासक आमन्त्रित किए जाने पर नालन्दा विश्वविद्यालय के आर्चा 'शान्तरक्षित' भी वहाँ गए। उन्होंने वहाँ 'समूचे' नामक बौद्ध बिहार का निर्माण कराया। बौद्ध मत के ग्रन्थों का अनुवाद किया गया तथा तिब्बत के निवासियों में से अनेकों को बौद्ध भिक्षु बनाया गया। इस तरह से पूरे मध्य एशिया और आस पास के अनेक देशों में धर्म के आधार पर ही भारतीय संस्कृति का प्रचार हुआ। इसलिए हमारी संस्कृति आज भी इतनी विशाल, सहिष्णु और उदार है कि हर कोई इसमें रंग ही जाता है। यहाँ पर अनेक प्रकार के धर्म अपनाए गए है। अनेक जातियाँ निवास करती है। सबकी बोलियाँ , रहन–सहन, आचार– विचार सब खुद अलग है। ऐसे में अनेकता में एकता वाली बात सिद्ध हो ही जाती है। भले ही यहाँ पर अलग–अलग, वेश–भूषा, खान–पान हो लकिन फिर भी यहाँ लोगों की संस्कृति एक ही है। यहाँ अलग–अलग देवी देवता की पूजा की जाती है। चाहे विदेशों में किसी भी देवता का न माना जाता है, लेकिन फिर भी विदेशों से लोग यहाँ आकर मन्दिरों में दान करते हैं। यह हमारी संस्कृति का ही प्रभाव है जो उन पर दिखाई दे रहा है। धर्म की हम बाते करें तो बौद्ध धर्म हमारी संस्कृति का प्रचार–प्रसार करने में संवेदनशील रहा है। बौद्ध धर्म के अनुयायियों का कार्य था सभी को सत्य का पाठ पढ़ाना।

भारतीय संस्कृति का रंग जब विदेशियों पर चढ़ता है तो पहुँच जाते हैं भारत के आंगन में ''मेरी दादी कहती थी कि भगवान अनुभ्ज्ञव के माध्यम से सिखाते हैं। भारत की यात्रा और रंगों से मुझे अपनी कला और दुनिया की सच्चाई को जानने के लिए एक नई समझ मिलती है।''

भारतीय संस्कृति विश्व की सर्वाधिक प्राचीन और समृद्ध संस्कृतियों में से एक है। भारत को विश्व की सभी संस्कृतियों की जननी माना जाता है। अब इसमें चाहे जीने की कला हो या तकनीकी क्षेत्र का विकास हो या फिर राजनीति और सामाजिक विकास ही क्यों न हो, इन सभी में भारतीय संस्कृति का हमेशा से ही एक महत्वपूर्ण स्थान रहा है। भारतीय संस्कृति आज भी अपने परम्परागत अस्तित्व के साथ अजर–अमर बनी हुई है। तमाम कमियों (भौतिक) के बावजूद कुछ अच्छाईयाँ या यूँ कह लें कि यहाँ का जीवन–दर्शन ऐसा है कि भारत की सीमाओं से बाहर रहने वाले लोग एक न एक बार यहाँ आने के ख्याहिश पालें रहते हैं। कुछ तो आकर ऐसे घुल–मिल जाते हैं जैसे उनका कुछ नाता हो यहाँ से।

विल स्मिथ की भारत – यात्रा

हाल ही में हॉलीबुड के सुपरस्टार माने जाने वाले विल स्मिथ आए थे। उन्होंने हरिद्वार जाकर पूजा7पाठ भी किया। उनका कहना है कि भारत आना उनके लिए बेहद सुखद अनुभव होता है। 50वर्षीय स्मिथ ने भारत यात्रा से जुड़ी कई तस्वीरें इंस्टाग्राम पर पोस्ट की। अपनी तस्वीर शेयर करते हुए उन्होंने एक कैप्शन भी दिया, जिसमें उन्होंने लिखा, ''मेरी दादी कहती थीं कि भगवान अनुभव के माध्यम से सिखाते हैं।'' वो कहते हैं कि भारत की यात्रा और रंगों से उन्हें अपनी कला और दुनिया की सच्चाई को जानने के लिए एक नई समझ मिलती है।

जूलिया रॉबर्ट के लिए हिन्दू धर्म

ऐसी ही भावनाएं हॉलीबुढ अभिनेत्री जूलिया रॉबर्ट की भी हैं, जो हिन्दू धर्म से इतना प्रभावित थीं कि उन्होंने हिन्दू धर्म ही अपना लिया। इसके पीछे उन्होंने वजह बताई थी कि हिन्दू धर्म में शांति और सुकून है। दरअसल वो अपनी एक फिल्म 'ईट प्रे लव' की शूटिंग के लिए भारत आई थी और वो तभी से हिन्दू बन गई। ऑस्कर पुरस्कार विजेता जूलिया ने कहा था कि अ बवह अपने कैमरामैन पति डेनियल मोडर और तीन बच्चों हैजल, फिनायस और हेनरी के साथ भजन–कीर्तन तथा प्रार्थना करने के लिए मंदिरों में जाती हैं। भारत की आध्यात्मिक शक्ति ने जूलिया को भारत का दीवाना बना दिया।

जापान की मयूमी ने जब छोड़ दी थी जॉब

राजस्थान की कला और संस्कृति से दुनिया भली–भाँति परिचित है। यहाँ के महल और हवेलियों ने विदेशी पर्यटकों को हमेशा से ही अपनी ओर आकर्षित किया है। जापान की एक महिला मयूमी मारवाड़ के कालबेलिया डांस की ऐसी दीवानी हुई की वो पिछले कई सालों से जोधपुर में नृत्य सीखने आ रही है। खबर के अनुसार, जोधपुर क एक बेटी ने मयमी को अपनी पारम्पिारिक नृत्य कला सिखाई।

माडवाड़ के कालबेलिया डांस को सीखने के बाद मयूमी जाान के टोक्यों और सपोरो शहर में कालबेलिया डांस सिखा रही हैं। अब तक वो कम से कम 50 जापानियों को मारवाड़ का यह नृत्य सिखा चुकी हैं। मयूमी को राजस्थान का यह डांस तो भाया ही, साथ ही उन्हों राजस्थानी कल्चर भी खूब भाया। बता दें कि जोधपुर की कालबेलिया डांसर आशा ने मयूमी को कड़ी मेहनत और लगन से यह डांस और गाना सिखाया। मयूमी ने अपना ये शौक अपनी जापानी जॉब छोड़कर पूरा किया था। कालबेलिया डांस सीखने के बाद उन्होंने जॉब छोड़कर जापान के दो शहरों में कालबेलिया डांस की क्लास लेना शुरू कर दिया।

जार्ज हैरिसनः हरे कृष्ण आंदोलन और हिन्दू धर्म जॉर्ज हैरिसन भी एक ऐसा ही नाम है, जिन्होंने 1960 के मध्य में हिन्दू धर्म को अपनाया था। पेशे से वो बीटल संगीतकार थे। साल 2001 में जब उनका देहान्त हुआ था तो उनका अंतिम संस्कार हिन्दू परम्परा के अनुसार किया गया और उनकी अस्तियों को गंगा–यमुना नदी

में प्रवाहित किया गया था। खबरों के अनुसार हैरिसन के बारे में कहा जाता है कि हरे कृष्णा आंदोलन से जुड़ने के बाद उन्होंने हिन्दू धर्म अपनाया था।

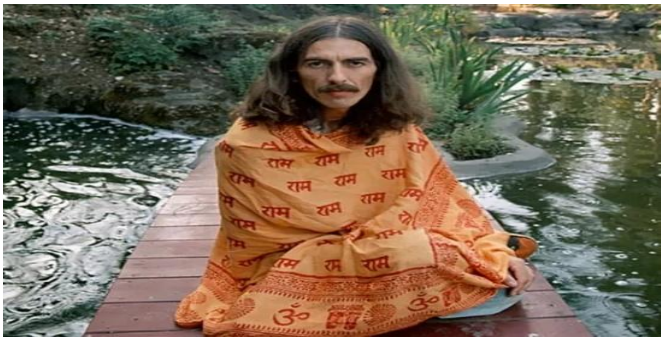

सन्दर्भ सूचीः–

1. भारतीय संस्कृति, प्रस्तावना (हिन्दू संस्कृति, पांडुरंग, सदाशिवख साने गुरू) पृ0–5
2. डॉ0 सोहन सिंह, भाषा संस्कृति और समाज, पृ0–31
3- The Centre of Indian Cuttterx, P. No.-15
4. राहुल सांकृत्यायन, बौद्ध संस्कृति पृ0–3
5. दिनकर, संस्कृति के चार अध्याय, पृ0–53
6. हजारी प्रसाद द्विवेदी, अशोक के फूल, पृ0–69
7. वासुदेव शरण अग्रवाल, साहित्य और संस्कृति, भूमिका पृ0–5
8. वासुदेव शरण अग्रवाल, कला और संस्कृति, भूमिका पृ0–3
9. स्वामी विवेकानन्द, कर्मयोग, पृ0–85
10. सने गुरू जी, (हिन्दी अनुवादक – बाबूराम जोशी), भारतीय संस्कृति, पृ0–206
11. डॉ0 सोहन सिंह, भाषा संस्कृति और समाज, पृ0–101
12. वही, पृ0–21